परामर्श

(अष्टम् सर्ग)

सार छन्द

द्वैरथ युद्ध हेतु कृत निश्चय,
कर्णार्जुन को देखा ।
सुर-मुनि तक न बता पाये थे,
क्या है विधि का लेखा ।
किन्तु हुए द्रौणायनि चिन्तित,
गये समीप नृपति के ।
थे मन में विचार अब निश्चित,
भीषण युद्ध विरति के ।।१।।

कहने लगे सुयोधन से वे,
मुझ पर प्रीति तुम्हें है ।
मेरे ज्ञान और विक्रम पर,
सदा प्रतीति तुम्हें है ।
मेरी राष्ट्र भक्ति पर सन्तत[१],
गर्व तुम्हें है रहता ।
सदा स्नेह सम्मान सुधा का,
निर्झर उर से बहता ।।२।।

सदा आपकी भूति[२] कामना,
हे भूपति ! रहती है ।
अर्थकरी वह सुनो गिरा जो,
आत्मा से बहती है ।
है मुझको विश्वास मान्य मम्,
यह प्रस्ताव करेंगे ।
छोड़ विषम रिपुता पाण्डव प्रति,
मैत्री भाव धरेंगे ।।३।।

देख चुके भीषण विनाश हम,
सत्रह दिन के रण का ।
विश्लेषण अब तो कर लो इस,
हिंसा के कारण का ।
यद्यपि निज अधिकार हेतु तुम,
नृप ! लड़ रहे लड़ाई ।
इस जन-धन-बल की आहुति से,
मिलती कौन बड़ाई ।।४।।

नहीं मांग थी पाण्डवेय की,
कुछ भी नृपति अनोखी ।
अहंकार वश ही कर बैठे,
आप न्याय अनदेखी ।
ठुकराया प्रस्ताव शान्ति का,
केशव किए विमानित[३] ।
लोभ नहीं तो दर्प और मद,
अपने किए प्रमाणित ।।५।।

नरपति धरणी को मत तौलो,
तुम अनर्घ[४] नरता से ।
अब भी लो विराम क्षयकारी,
घातक तत्परता से ।
किसके पति कहलाओगे जब,
नर ही नहीं बचेंगे ।
आमिषभोजी जीव कुरुधरा,
पर नव राज्य रचेंगे ।।६।।

ग्यारह अक्षौहिणी वाहिनी,
ले रण में उतरे थे ।
देख असंख्य प्रवीर विपक्षी,
प्रतिभट मुख उतरे थे ।
रविहय[५] अक्षौहिणी मान था,
पाण्डवेय के दल का ।
सहज उस समय था हे भूभृत[६],
मान सुसाधन बल का ।।७।।

सत्रह दिवस व्यतीत हुए हैं,
हुई दशा परिवर्तित ।
हुआ अनुदिवस पक्ष हमारा,
अरि से परम विमर्दित ।
ग्यारह सहस बचे हैं स्यन्दन,
इतना ही गज दल है ।
वाजिवृन्द दो लक्ष पदातिक,
तीन कोटि ही बल है ।।८।।

कर डाला हमने भी अरिदल,
का विनाश मन माना ।
रुधिर किन्तु इस लक्ष्य प्राप्ति में,
पड़ा अजस्त्र[७] बहाना ।
छः सहस्त्र रथ इतने ही करि,
अयुत[८] बचे हैं घोड़े ।
दो करोड़ पैदल सैनिक हैं,
हमसे निश्चय थोड़े ।।९।।

किन्तु अति - रथी और महारथ,
हमने हैं बहु खोये ।
मात्र रूधिर से नहीं अश्रु से,
भी निज वदन भिंगोये ।
चले गये अविजेय पितामह,
परशुराम सम अपने ।
आयुध ज्ञान महानिधि खोये,
तात कहाँ जय सपने ।।१०।।

वर[९] गजपति भगदत्त पार्थ ने,
सिन्धुराज[१०] को मारा ।
भैमसेनि[११] ने असुर अलम्बुष,
को रण मध्य पछाड़ा ।
क्षेमधूर्ति वाल्हीक दुशासन,
हुए वृकोदर मर्दित ।
सोमदत्त जलसंघ महाबल,
सात्वत[१२] से हैं अर्दित ।।११।।

विन्द और अनुविन्द सुधन्वा,
अचल सुदक्षिण नरपति ।
पार्थ शरों की भेंट चढ़ गये,
रहे देखते कुरूपति ।
हुआ कुपित सौभद्र मरे तब,
शल्य कर्ण के भ्राता ।
था न बृहद्बल सत्यश्रवा का,
अश्वकेतु का त्राता ।।१२।।

सौ थे राजन ! आज बचे हो,
तेरह कौरव भाई ।
भीम कोप ज्वाला से क्षति अति,
तुमने तात उठाई ।
हैं गौतम अवध्य मैं भी हूँ,
इसीलिए बच पाये ।
शल्य और हार्दिक्य[१३] शकुनि हैं,
भट अब गिने गिनाए ।।१३।।

चित्रायुध श्रुतवर्म सत्यव्रत,
दुश्शल हैं अरिसूदन ।
आप आपके अनुज और जय,
शल है वैरि निषूदन ।
पर वैरी की शक्ति अतुल है,
जीवित पाँचों भ्राता ।
और अमित तेजा यदुभूषण,
उनके हैं चिर त्राता ।।१४।।

यद्यपि उनके कई महारथ,
हमने भी हैं मारे ।
श्वेत भीष्म ने और शल्य ने,
उत्तर हैं संहारे ।
शक्रदेव का भानुमान का,
केतुमान का जीवन ।
हरा पितामह ने मानों रण,
में कालानल ही बन ।।१५।।

शतानीक दृढ़सेन क्षेम को,
पूज्य पिता ने भेदा ।
क्षत्रधर्म वसुदान सत्यजित,
को यम गृह को खेदा ।
वीरकेतु को धृष्टकेतु को,
शिवि को मार गिराया ।
द्रुपद और राजा विराट का वध,
कर शत्रु हराया ।।१६।।

अंशुमान मणिमान चित्रवर्मा,
यम सदन पठाए ।
पुरुजित रोचमान के शव भी,
सङ्गर बीच गिराए ।
कुन्तिभोज मदिराश्व सत्यधृति,
खो बैठे प्राणों को ।
सूर्यदत्त भी या सुकेतु क्या,
सह पाये बाणों को ।।१७।।

नर संहार किया अति भीषण,
मैने भी हे नरपति ।
पाण्ड्यराज को और नील को,
दी बाणों से सद्‌गति ।
चैदिराज सुत, पौरवेश को,
मालवेश को मारा ।
अञ्जन - पर्वा मार असुर दल,
को क्षण में संहारा ।।१८।।

नहीं बचे सौभद्र घटोत्कच,
को यम सदन पठाया ।
अरि दल का क्षय किया कर्ण ने,
जब गुरू धनुष उठाया ।
धृष्टद्युम्न से, सात्यकि से हैं,
वीर अभी रिपु दल में ।
और शौर्य के साथ कुशल है,
शत्रु गूढ़ छल-बल में ।।१६।।

छल से ही दो सेनापति रिपु,
ने हैं मार गिराये ।
माया से ही कहीं कर्ण को,
अरि रण में न हराये ।
वैसे भी नर विजय कर्ण के,
हेतु बहुत दुष्कर है ।
यद्यपि अपराजेय चमू पति,
महाबली भास्वर है ।।२०।।

एकाकी अर्जुन से उस दिन,
जब हम सब थे हारे ।
याद करो वह रण विराट का,
बने न कर्ण सहारे ।
इस रण में भी भीमसेन से,
और पार्थ से हारा ।
फिर भी यह राधेय गरजता,
अहंकार का मारा ।।२१।।

मुझको भी कौन्तेय वीर से,
परिभव प्राप्त हुआ है ।
यह न समझना मेरे मन में,
रिपुभय व्याप्त हुआ है ।
जो यथार्थ उसको कहता हूँ,
नृप तुम द्वेष न धरना ।
धर्म हितैषी का स्वमित्र को,
सावधान है करना ।।२२।।

कौरवेश तुम भी अग्रज से,
अर्जुन से हो हारे ।
व्यथित हुए हो भीमसेन से,
सात्यकि ने शर मारे ।
धृष्टद्युम्न से हुए पराजित,
परिभव मिला नकुल से ।
अब भी जागो करो वैर मत,
अपने उत्तम कुल से ।।२३।।

गौतम भी अर्जुन से चिर तक,
भीषण युद्ध लड़े थे ।
किन्तु व्यथित हो निशित शरों से,
संज्ञाहीन पड़े थे ।
सात्यकि से पार्षत से परिभव,
मिलता कृतवर्मा को ।
भीम विजित मद्रेश पराजित,
लखा क्षत्रधर्मा को ।।२४।।

करो विवेक सपत्न[१४] शक्ति का,
मति का संसाधन का ।
करो भूल मत अभी समय है,
अपने हित साधन का ।
रखो शान्ति प्रस्ताव भाव मत,
अहंकार का धारो ।
नहीं हीनता धरो चित्त में,
मत निज को धिक्कारो ।।२५।।

द्वेष असूया से पर सदगुण,
नर पहचान न पाते ।
लोभ, क्रोध नर के विवेक बल,
को समग्र हैं खाते ।
है श्रद्धा मेरी अग्रज[१५] में,
वे सब भूत हितैषी ।
मानेंगे प्रस्ताव परिस्थिति,
चाहे रण की ऐसी ।।२६।।

मान गये यदि बात युधिष्ठिर,
सभी अनुज मानेंगे ।
उनके मन प्रति - कूल वृकोदर,
भी न समर ठानेंगे ।
वासुदेव हैं जग हितकारी,
शान्ति उन्हें अतिप्रिय है ।
उनके वशवर्ती अर्जुन से,
सम्भव नहीं अप्रिय है ।।२७।।

मान मुझे देते हैं पाण्डव,
यदि प्रस्ताव करूँगा ।
स्वीकृत होगा त्वरित आपदा,
कुरू की घोर हरूँगा ।
अङ्गराज भी अङ्गीकृत मम,
यह प्रार्थना करेंगे ।
प्रतिद्वन्द्विता पार्थ प्रति अपने,
मन से आशु हरेंगे ।।२८।।

चार तरह के मित्र लोक में,
कहे गये हैं राजन ।
सहज, सन्धि से, या कि द्रव्य से,
बनें प्रीति के भाजन ।
चौथे वे जो विक्रम से हो,
भीत शरण आते हैं ।
सम्भव चतुर्विधा मैत्री यदि,
वचन तुम्हें भाते हैं ।।२६।।

मैं भी लोक हितार्थ जनक का,
शोक करूँगा विस्मृत ।
हो यदि कुरूजन - पद में सुख का,
राज्य शान्ति हो विस्तृत ।
भूलूँगा पाञ्चाल नाश की,
विषम प्रतिज्ञा सत्वर ।
तपोनिरत होना है मुझको,
त्याग जगत यह नश्वर ।।३०।।

पकड़ हाथ कुरुपति तब बोले,
वचन आपका ऋत है ।
किए आपने अमित पराक्रम,
यह जन अति उपकृत है ।
छोड़ दीर्घ निःश्वास कहा फिर,
शान्ति नहीं सम्भव है।
नहीं दीनता हेतु सुयोधन,
का जग में उद्भव है ।।३१।।

पाण्डव प्रति अपकार श्रृङ्खला,
आयत[१६] बहुत हमारी ।
कहाँ प्रतीति उन्हें, अवमानित[१७],
होगी बात तुम्हारी ।
दाता ही जो रहा सदा,
याचक कैसे बन जाये ।
नहीं सिंह रह सकता बैठा,
श्वा[१८] यदि भाग छुड़ाए ।।३२।।

मुझे अडिग विश्वास कर्ण पर,
रण में हम जीतेंगे ।
शोक, क्षोभ के संशय के क्षण,
तात शीघ्र बीतेंगे ।
अमर द्रौणि, गौतम हैं दल में,
फिर होगी क्या शंका ।
कौरव जन का सदा बजेगा,
सप्तद्वीप में डंका ।।३३।।

नकुल और सहदेव युधिष्ठिर,
वृष ने त्वरित हराये ।
अङ्गराज की अनुकम्पा ने,
उनके प्राण बचाए ।
मान विमर्दित हुआ भीम का,
ग्रीवा में धनु डाला ।
मात्र पार्थ को अब पीना है,
परिभव विष का प्याला ।।३४।।

मिली विजय भी यदि हे राजन,
इतना सब कुछ खोकर ।
बैठोगे जब सिंहासन पर,
बिखरे तन्तु सँजोकर ।
राज महल में भी देखोगे,
श्वेत वसन में लिपटीं ।
श्री हत वन्धुवधू दुख ज्वाला,
परिवृत भय से सिमटीं ।।३५।।

कैसे हे नृप सुन पाओगे,
बन्दीजन जय नारे ।
गूँज रहे कातर क्रन्दन से,
पुर के गृह जब सारे ।
नहीं सामना कर पाओगे,
निर्निमेष नयनों का ।
क्या समझोगे अर्थ रुदन के,
अस्फुट उन वचनों का ।।३६।।

जब देखेगी तुम्हें एक क्षण,
हतभर्तृका[१६] नवोढा[२०] ।
होगा भिन्न हृदय तव कुरुपति,
भले शूर तुम सोढा[२१] ।
कह जाती है नृपति बहुत कुछ,
एक दबी सी सिसकी ।
अतल वेदना गर्भित होती,
विवश अलक्षित हिलकी ।।३७।।

आहों से अनुयात सर्वदा,
होतीं भट - हुंकारें ।
आभूषण झंकृति अपसारक[२२],
कटु आस्त्री झंकारे ।
हरती है सीमन्त लालिमा,
नर पुंगव शिर लाली ।
प्रायः स्वजनगरी[२३] बन जाती,
क्षुधिता हिंसा व्याली ।।३८।।

कपट दुरोदर[२४] में ही सम्भव,
क्षतिहीना जय नर की ।
नहीं द्विजिह्वा मात्र, द्विवदना,
नागिन कुटिल समर की ।
जिसको समझ रहे स्त्रजहस्ता[२५],
सुहासिनी जयबाला ।
असृज[२६] पिपासाकुला पिशाची,
वह वस्तुतः कराला ।।३९।।

शुष्क काष्ठ में लता कुसुम में,
नहीं भेद कुछ करता।
उच्छिख[२७] दावानल सब क्षण में,
भस्मसात है करता।
बाल वृद्ध अबला निरीह पशु,
तक तापित हैं रण से।
अनिल वारि तक होते विषयुत,
धरणी भरती व्रण से।।४०।।

कर में तुम्हें मिलेंगे केवल,
आँसू विकल प्रजा के।
भेंट चढ़ेंगे अभी बहुत नर,
प्रसरित विषम रुजा[२८] के।
श्मशानों पर राज्य पिशाचों,
को ही भा सकता है।
कौन कोटिशः मृत देहों का,
भार उठा सकता है।।४१।।

अब भी दो कुछ तोष सुयोधन,
प्रज्ञा[२९] चक्षु पिता को।
व्रतधारिणी धारिणी[३०] सम उन,
सुबलराज[३१] दुहिता को।
करो विशीर्ण विवेक अर्क से,
घोर घटा असिता को।
सन्धिनीर शीतल कर अर्पित,
करो प्रशान्त चिता को।।४२।।

करिपुर[३२] से तुम करो प्रशासन,
इन्द्रप्रस्थ से धर्मज[३३] ।
हो अभिवृद्धि प्रभाव शक्ति में,
सम्पद बढ़े सुकर्मज ।।
अलका अमरावति सी शोभित,
उभय पुरी हों रम्या ।
श्री शारदा सुप्रीत प्रकृति पर,
हो कुरु वसुधा धन्या ।।४३।।

प्राण दिए हैं जिन वीरों ने,
मेरे हित साधन को ।
स्वर्ग बैठ वे देखेंगे यदि,
अरि के आराधन को ।
क्या सोचेंगे मेरे भ्राता,
जिनको सुगति मिली है ।
इस मानी कौरव को भय से,
कैसी कुमति मिली है ।।४४।।

दुःशासन के साथ किया जो,
कृत्य भीम ने दारूण ।
अन्तिम क्षण तक होगा मेरी,
मर्म व्यथा का कारण ।
नहीं मोह होता मानी को,
हे गुरूसुत ! जीवन का ।
क्या होगा उसको प्रलोभ इस,
तुच्छ धरा का धन का ।।४५।।

अतः न रोको वृष[३४] को, संशय,
मैं मुझको मत डालो ।
विनती इतनी सुनो द्विजोत्तम,
सेना भार सँभालो ।
दण्डित करो द्रुपद के सुत को,
द्रौणि क्षान्ति[३५] मत धारो ।
शान्ति शत्रुक्षयमूला होती,
रिपुदल को संहारो ।।४६।।

मौन हुए अश्वत्थामा मन
में विचार यह आया ।
बोध विनाशशील प्राणी को,
कहाँ जगत में भाया ।
तर्क बुद्धि से या उद्यम से,
नियति न टलती जग में ।
काल चक्र से बंधा सत्य हर,
बढ़ता क्षय के मग में ।।४७।।

मालिनी वृत्त

सहज हितकरी गाङ्गेय[३६] की गीः[३७] अमान्या ।
अपरिगणित वाणी वैदुरी[३८] भी हुई है ।
शम हित हरि ने झेली सभा में अवज्ञा ।
नियत समय वेधा[३६] ने प्रजा का किया है ।।४८।।

सन्दर्भ सूची

१. सतत, लगातार, सदैव, २. कल्याण, ३. अपमानित, ४. अमूल्य, ५. सात, ६. राजा, ७. लगातार, ८. दस हजार, ६. श्रेष्ठ, १०. जयद्रथ, ११. भीम पुत्र घटोत्कच, १२. सात्यकि, १३. कृतवर्मा, १४. शत्रु, १५. युधिष्ठिर, १६. लम्बी, १७. अमान्य, १८. कुत्ता, १६. जिसका पति मारा गया हो, २०. नव विवाहिता, २१. सहन करने वाला, २२. दूर करने वाला, २३. अपने ही लोगो को निगलने वाली, २४. द्यूत जुआ, २५. माला हाथ में लिए हुए, २६. रक्त, २७. ऊपर उठती शिखा (लपट) वाला, २८. रोग, २६. जन्मान्ध, ३०. पृथ्वी, ३१. गान्धार नरेश, गान्धारी के पिता, ३२. हस्तिनापुर, ३३. युधिष्ठिर, ३४. कर्ण, ३५. सहिष्णुता क्षमा, ३६. भीष्म, ३७. वाणी, ३८. विदुर की, ३६. ब्रह्मा।

❖